आधुनिक हिन्दी की दिशा तय करने वाले योद्धा : राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द'

राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' (जन्म 3 फरवरी 1823) को इतिहास में खलनायक की तरह चित्रित किया गया है, किन्तु, जिस समय देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी संकट काल से गुजर रही थी, राजा शिवप्रसाद उसके समर्थन और उत्थान का ब्रत लेकर साहित्य क्षेत्र में आए। उन्होंने हिन्दी, उर्दू, फारसी, संस्कृत, अंग्रेजी, बंगला आदि भाषाओं का गहरा अध्ययन किया था। बनारस में जन्म लेने वाले राजा शिवप्रसाद ने तृतीय सिख युद्ध में खुलकर अंग्रेजों का साथ दिया था और फिर सरकारी स्कूलों के इंस्पेक्टर हो गए। आरंभ से ही साहित्य में गहरी रुचि रखने वाले राजा शिवप्रसाद की प्रमुख पुस्तकें है- 'मानवधर्मसार', 'योगवाशिष्ठ के कुछ चुने हुए श्लोक', 'उपनिषद् सार', 'भूगोलहस्तामलक', 'स्वयंबोध उर्दू', 'वामा मनरंजन', 'आलसियों का कोड़ा', 'विद्यांकुर', 'राजा भोज का सपना', 'वर्णमाला', 'हिन्दुस्तान के पुराने राजाओं का हाल', 'इतिहास तिमिर नासक', (भाग-1, 2, और 3), 'सिखों का उदय और अस्त', 'गुटका' (भाग-1,2,3), 'नया गुटका' (भाग-1,2), 'हिन्दी व्याकरण', 'कुछ बयान अपनी जबान का', 'बालबोध', 'सैण्डफोर्ड और मारटन की कहानी', 'बच्चों का ईनाम', 'लड़कों की कहानी', 'वीरसिंह का वृत्तान्त', 'गीतगोविन्दादर्श', 'कबीर का टीका' आदि।

वह समय हिन्दी क्षेत्र की जनता की भावनाओं का आदर करते हुए और हिन्दी भाषा की जातीय प्रवृत्ति को लक्ष्य में रखकर हिन्दी गद्य को सर्वमान्य रूप देने का था, इसके लिए निर्णायक कदम उठाने के पूर्व पर्याप्त सोच-विचार की आवश्यकता थी। राजा शिवप्रसाद ने सोचविचार कर और वक्त की नजाकत को परखते हुए संस्कृत, फारसी, अंग्रेजी तथा ठेठ हिन्दी आदि सभी भाषाओं में प्रचलित आम बोलचाल के शब्दों से परहेज न करते हुए एक सर्वमान्य भाषा बनाने की चेष्टा की जिसे वे 'आम फहम और खास पसंद' भाषा कहते थे। 'भूगोलहस्तामलक', 'वामा मन रंजन', 'राजाभोज का सपना' आदि उनकी कृतियों में इसी तरह की भाषा का इस्तेमाल किया गया है। हाँ, वे हिन्दी का 'गँवरपन' जरूर दूर करना चाहते थे और इसके लिए वे उस जमाने की अदालत की भाषा से परहेज नहीं करते थे। किन्तु लिपि के प्रश्न पर वे हर हालत में देवनागरी के पक्षधर थे। उनका इस बात में पूरा विश्वास था कि हिन्दी और उर्दू दो भाषाएं नहीं है और उनमें मात्र लिपि भेद है। इसीलिए उन्होंने उपर्युक्त कथित दो भाषाओं के लिए एक ही व्याकरण (कॉमन ग्रामर) की अवधारणा विकसित की और हिन्दी व्याकरण की रचना भी की जिसका प्रकाशन 1875 ई. में हुआ।

वास्तव में राजा शिवप्रसाद की पूरी लड़ाई देवनागरी लिपि की लड़ाई थी। वे हिन्दी और उर्दू को अलग-

अलग भाषा नहीं मानते थे। 1867 ई. में जब प्रान्तों में प्रान्तीय भाषाओं को राज काज की भाषा बनाने का निर्णय हुआ तो उस समय हिन्दुस्तानी को उर्दू लिपि में लिखने का प्रचलन था। राजा शिवप्रसाद ने नागरी लिपि के लिए जोरदार आन्दोलन चलाया क्योकि उनके अनुसार उर्दू के कारण सरकारी नौकरियों पर मध्यवर्गीय कायस्थों और मुसलमानों का कब्जा था। आम जनता के लिए सरकारी नौकरियां दुर्लभ थी। उन्होंने सरकार को इस संबंध में कई मेमोरन्डम दिए जिनमें माँग की कि अदालतों की भाषा से फारसी लिपि को हटा दिया जाय और उसकी जगह हिन्दी (नागरी) लिपि को लागू किया जाय। 1881 ई. में हिन्दी और देवनागरी लिपि को कचहरियों में जो प्रतिष्ठा मिली उसमें राजा शिवप्रसाद की प्रमुख भूमिका थी।

भारतेन्दु हरिश्चंद्र को हिन्दी नवजागरण का अग्रदूत कहा जाता है। भारतेन्दु ने खुद घोषित किया कि “हिन्दी नए चाल में ढली” (हरिश्चंद्र मैग्जीन, 1873)। जबकि भारतेन्दु से दशकों पूर्व राजा शिप्रसाद ने ऐसा सहज और परिमार्जित गद्य लिखा कि उस तरह का गद्य भारतेन्दु कभी नहीं लिख सके।

राजा शिवप्रसाद को अपने ही शहर बनारस के लोगों द्वारा बड़े सुनियोजित तरीके से बदनाम किया गया। भारतेन्दु मंडल के लेखकों ने उनके ऊपर आरोप लगाया कि वे देवनागरी में ‘खालिस उर्दू’ लिखते हैं। ‘सितारेहिन्द’ का खिताब मिलने पर उन्हें अंग्रेजों का चापलूस कहा गया। राधाचरण गोस्वामी और बालकृष्ण भट्ट जैसे भारतेन्दु मण्डल के सदस्यों ने इस अभियान में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। 1881-82 में गोरक्षा की आवाज इंग्लैण्ड की संसद तक पहुंचाने के लिए एक प्रतिनिधि मंडल भेजना तय हुआ और काशीनरेश ने उसमें शिवप्रसाद को शामिल किया तो बालकृष्ण भट्ट आदि ने इसका जमकर विरोध किया।

वे अपने समय के मुस्लिम बौद्धिक सर सैयद अहमद खाँ का लगातार विरोध करते रहे। किन्तु उनका वह विरोध सैद्धान्तिक था। सर सैयद अहमद खाँ अदालतों में उर्दू भाषा और लिपि की मांग करने वाले मुसलमानों के अगुआ थे। वे उस जमाने में सबसे प्रभावशाली मुसलमान थे। वे कई पुस्तकों के लेखक, ‘तहजीबुल इखलाक’ पत्रिका के संपादक, अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी के संस्थापक, मुसलमानों के सर्वमान्य नेता और सबसे अधिक अंग्रेज बहादुर के सबसे प्रिय मुसलमान थे। ऐसे प्रभावशाली व्यक्ति का विरोध करना आसान नहीं था। राजा शिवप्रसाद ने निजी हित को दांव पर लगाकर उनसे पंगा लिया क्यों कि सर सैयद अहमद खां अंग्रेजों को समझा रहे थे कि हिन्दी, हिन्दुओं की जबान है जो बुतपरस्त होते हैं और उर्दू मुसलमानों की, जिनके साथ अंग्रेजों का मजहबी रिश्ता है। दोनो ही सामी या पैगम्बरी मत को मानने वाले होते हैं।

वक्त की नजाकत को पहचानते हुए देवनागरी लिपि और हिन्दुस्तानी भाषा की प्रतिष्ठा के लिए जो व्यक्ति अपने समय के सर्वाधिक प्रभावशाली मुसलमानों और अंग्रेजों से लोहा ले रहा था, जिसने हिन्दी को प्रान्त में शिक्षा का माध्यम बनवाया, हिन्दी में पाठ्यपुस्तकें तैयार करवायी, प्रभावशाली हिन्दी गद्य लिखा, देवकीनंदन खत्री की तरह हिन्दी को लोकप्रिय बनाने में योगदान किया उसी पर हिन्दी द्रोही का आरोप लगाया गया। उसे जहां अपनों का समर्थन मिलना चाहिए वहां उसे तरह-तरह से अपमानित किया गया।

23 मई 1895 को उनका निधन हुआ। हम हिन्दी के ऐसे महानायक को उनके जन्मदिन पर नमन करते हैं।

साभार
वैश्विक हिंदी सम्मेलन, मुंबई

vaishwikhindisammelan@gmail.com